भारतीय नौ-निर्माणकला

(लेखक—पं० श्रीगंगाशंकरजी मिश्र, एम० ए०)

इतिहास, पुराण तथा अपने यहाँके अन्य प्राचीन साहित्यमें बड़े-बड़े जहाजोंकी बहुत चर्चा आयी है। रामायण 'अयोध्याकाण्ड' में ऐसी बड़ी-बड़ी नावोंका उल्लेख है, जिनमें सैकड़ों कैवर्त योद्धा तैयार रहते थे—

नावां शतानां पञ्चानां कैवर्तानां शतं शतम्।
सन्नद्धानां तथा यूनान्तिष्ठन्त्वित्यभ्यचोदयत्॥

'महाभारत' में तो यन्त्रसंचालित नावोंका भी वर्णन आया है—

सर्ववातसहां नावं यन्त्रयुक्तां पताकिनीम्।

समुद्रमार्गसे विभिन्न देशोंसे बराबर व्यापार होता था। 'वाराहपुराण' में गोकर्ण वैश्यकी कथा आती है, जो विदेशोंमें रत्नोंका व्यापार किया करता था—

पुनस्तत्रैव गमने वणिग्भावे मतिर्गता।
समुद्रयाने रत्नानि महास्थौल्यानि साधुभिः॥

दण्डीके 'दशकुमारचरित' में रत्नोद्भव वणिक्की कथा है, जिसका जहाज पटना जाते हुए डूब गया था—

ततः सोदरविलोकनकुतूहलेन रत्नोद्भवः कथञ्चिच्छूरमनुनीय चपललोचनयानया सह प्रवहणमारुह्य पुरुषपुरमभिप्रतस्थे। कल्लोलमालिकाभिहतः पोतः समुद्राम्भस्यमज्जत।

दूसरा वणिक् मित्रगुप्त किसी द्वीपमें पहुँचा; वहाँ श्वान जैसे वाराहको घेर लेते हैं, वैसे ही यवनोंकी नावोंने जहाजको घेर लिया—

तावदतिजवा नौकाः श्वान इव
वराहमस्मत्पोतं पर्यरुत्सत।

भर्तृहरिने लिखा है कि दुस्तर समुद्रके पार करनेमें जहाज काम देता है—

पोतो दुस्तरवारिराशितरणे।

कौटिलीय 'अर्थशास्त्र' के 'नावध्यक्ष' प्रकरणमें नौसेना और राज्यकी ओरसे नावोंके प्रबन्धका पूरा विवरण मिलता है।

इन नावों और जहाजोंकी निर्माण-कलापर ज्यौतिषाचार्य वराहमिहिरकृत 'बृहत्संहिता' तथा भोजकृत 'युक्तिकल्पतरु' में कुछ प्रकाश डाला गया है। 'वृक्ष-आयुर्वेद' के अनुसार वृक्षोंमें भी ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र—ये चार जातियाँ हैं। लघु तथा कोमल लकड़ी, जो सहजमें जोड़ी जा सके, ब्राह्मणजातिकी मानी जाती है। क्षत्रियजातिकी लकड़ी हल्की और दृढ़ होती है। वह अन्य प्रकारकी लकड़ियोंसे जोड़ी नहीं जा सकती। वैश्य जातिकी लकड़ी कोमल तथा भारी होती है और शूद्रजातिकी लकड़ी दृढ़ तथा भारी होती है। जिनमें दो जातियोंके गुण पाये जाते हैं, वे 'द्विजाति' हैं—

लघु यत्कोमलं काष्ठं सुघटं ब्रह्मजाति तत्।
दृढाङ्गं लघु यत्काष्ठमघटं क्षत्रजाति तत्॥
कोमलं गुरु यत्काष्ठं वैश्यजाति तदुच्यते।
दृढाङ्गं गुरु यत्काष्ठं शूद्रजाति तदुच्यते॥
लक्षणद्वययोगेन द्विजातिः काष्ठसङ्ग्रहः॥

भोजका कहना है कि क्षत्रिय काठकी बनी हुई नौका सुख-सम्पत्प्रद होती है—

क्षत्रियकाष्ठैर्घटिता भोजमते सुखसम्पदं नौका।

इसके बने हुए जहाज विकट जलमार्गोंमें काम दे सकते हैं—

अन्ये लघुभिः सुदृढैर्विदधति जलदुष्पदे नौकाम्।

दूसरी प्रकारकी लकड़ियोंसे जो नौकाएँ बनायी जाती हैं, उनके गुण अच्छे नहीं होते। उनमें आराम नहीं मिलता। वे टिकाऊ भी नहीं होतीं, पानीमें उनकी लकड़ी सड़ने लगती है और साधारण भी धक्का लगनेपर वे फटकर डूब जाती हैं—

विभिन्नजातिद्वयकाष्ठजाता
न श्रेयसे नापि सुखाय नौका।
नैषा चिरं तिष्ठति पच्यते च
विभिद्यते सरिति मज्जत च॥

भोजने यह भी लिखा है कि जहाजोंके पेंदोंके तख्तोंको जोड़नेके लिये लोहेसे काम न लेना चाहिये; क्योंकि सम्भव है कि समुद्रकी चट्टानोंमें कहीं चुम्बक हो तो वह स्वभावतः लोहेको अपनी ओर खींचेगा, जिससे जहाजोंके लिये खतरा है—

न सिन्धुगाद्यार्हति लौहबन्धं
तल्लौहकान्तैर्ह्रियते च लौहम्।
विपद्यते तेन जलेषु नौका
गुणेन बन्धं निजगाद भोजः॥

'युक्तिकल्पतरु' में आकार-प्रकार, लंबाई-चौड़ाईकी

Scanned with CamScanner

दृष्टिसे नौकाओंके कई प्रकार बतलाये गये हैं। नौकाओंके पहले तो दो विभाग किये गये हैं—एक तो 'सामान्य', जो साधारण नदियोंमें चल सकें और दूसरे 'विशेष', जो समुद्र-यात्राका काम दे सकें—

सामान्यश्च विशेषश्च नौकाया लक्षणद्वयम्।

लंबाई-चौड़ाई और ऊँचाईका ध्यान रखते हुए क्षुद्रा, मध्यमा, भीमा, चपला, पटला, भया, दीर्घा, पत्रपुटा, गर्भरा, मन्थरा—ये दस प्रकारकी सामान्य नावें बतलायी गयी हैं। क्षुद्राकी लंबाई १६, चौड़ाई ४ और गहराई या ऊँचाई ४ हाथ होनी चाहिये। इसी तरह इन सबकी नाप दी हुई है और मन्थराकी लंबाई १२०, चौड़ाई ६० और ऊँचाई भी ६० हाथकी बतलायी गयी है। सबमें चौड़ाई और ऊँचाईकी एक ही नाप है—

राजहस्तमितायामा तत्पादपरिणाहिनी।
तावदेवोन्नता नौका क्षुद्रेति गदिता बुधैः॥
अतः सार्द्धमितायामा तदर्द्धपरिणाहिनी।
त्रिभागेनोत्थिता नौका मध्यमेति प्रचक्षते॥
क्षुद्राथ मध्यमा भीमा चपला पटला भया।
दीर्घा पत्रपुटा चैव गर्भरा मन्थरा तथा॥
नौकादशकमित्युक्तं राजहस्तैरनुक्रमम्।
एकैकवृद्धैः सार्द्धैश्च विजानीयाद् द्वयं द्वयम्॥
उन्नतिश्च प्रवीणा च हस्तादर्द्धांशलक्षिता॥

'विशेष' के भी दो विभाग किये गये हैं—दीर्घा और उन्नता। फिर दीर्घाके दीर्घिका, तरणि, लोला, गत्वरा, गामिनी, तरी, जंघाला, प्लाविनी, धारिणी और वेगिनी—ये दस विभाग किये गये हैं। इनमें लंबाई अधिक है, पर चौड़ाई थोड़ी और गहराई उससे भी कम है। वेगिनीकी लंबाई १७६,चौड़ाई २२ और ऊँचाई १७$\frac{३}{५}$ हाथ बतलायी गयी है—

राजहस्तद्वयायामा अष्टांशपरिणाहिनी।
नौकेयं दीर्घिका नाम दशाङ्गेनोन्नतापि च॥
दीर्घिका तरणिर्लोला गत्वरा गामिनी तरिः।
जङ्घाला प्लाविनी चैव धारिणी वेगिनी तथा॥
राजहस्तैकैकवृद्ध्या नौकानामानि वै दश।
उन्नतिः परिणाहश्च दशाष्टांशमितौ क्रमात्॥

उन्नताके ऊर्ध्वा, अनूर्ध्वा, स्वर्णमुखी, गर्भिणी और मन्थरा—ये पाँच विभाग किये गये हैं। इनमें मन्थराकी ऊँचाई ४८ हाथतक रखी गयी है—

राजहस्तद्वयमिता तावत्प्रसरणोन्नता।
इयमूर्ध्वाभिधा नौका क्षेमाय पृथिवीभुजाम्॥
ऊर्ध्वानूर्ध्वा स्वर्णमुखी गर्भिणी मन्थरा तथा।
राजहस्तैकैकवृद्ध्या नामपञ्चत्रयं भवेत्॥

नौकाकी सजावटोंका भी बहुत सुन्दर वर्णन आया है। सजावटमें सोना, चाँदी, ताँबा और तीनोंको मिलाकर प्रयोग करना चाहिये। चार शृंग (मस्तूल)-वाली नौकाको सफेद, तीनवालीको लाल, दोवालीको पीला और एकवालीको नीला रँगना चाहिये। नौकाओंका मुख सिंह, महिष, सर्प, हाथी, व्याघ्र, पक्षी, मेढक या मनुष्यकी आकृतिका बनाया जा सकता है—

धात्वादीनामतो वक्ष्ये निर्णयं तरिसंश्रयम्।
कनकं रजतं ताम्रं त्रितयं वा यथाक्रमम्॥
ब्रह्मादिभिः परिन्यस्य नौकाचित्रणकर्मणि।
चतुःशृंगा त्रिशृङ्गाभा द्विशृङ्गा चैकशृङ्गिणी॥
सितरक्तापीतनीलवर्णान् दद्याद् यथाक्रमम्।
केसरी महिषो नागो द्विरदो व्याघ्र एव च॥
पक्षी भेको मनुष्यश्च एतेषां वदनाष्टकम्।
नावां मुखे परिन्यस्य आदित्यादिदशाभुवाम्॥

नावोंके ऊपर कोठरी,कमरा आदि बनानेकी दृष्टिसे नावोंके तीन भेद हैं—सर्व, मध्य और अग्रमन्दिरा—

सगृहा त्रिविधा प्रोक्ता सर्वमध्याग्रमन्दिरा।

जिसमें एक सिरेसे दूसरे सिरेतक मन्दिर बना हो, वे नावें सर्वमन्दिरा कहलाती हैं। ये राजाके कोष, अश्व, नारी आदि ले जानेके लिये होती हैं।

सर्वतो मन्दिरं यत्र सा ज्ञेया सर्वमन्दिरा।
राज्ञां कोषाश्वनारीणां यानमत्र प्रशस्यते॥

जिनके मध्यमें मन्दिर है, वे मध्यमन्दिरा कहलाती हैं। ये राजाके सैर-सपाटेके काममें आती हैं और वर्षाकालके लिये बहुत उपयुक्त हैं—

मध्यतो मन्दिरं यत्र सा ज्ञेया मध्यमन्दिरा।
राज्ञां विलासयात्रादिवर्षासु च प्रशस्यते॥

जिनके आगेकी ओर मन्दिर बना हुआ है, वे अग्रमन्दिरा कहलाती हैं। ये बड़ी-बड़ी नावें जहाजकी तरह होती हैं, जो लंबी यात्रा और युद्धके लिये उपयुक्त हैं—

अग्रतो मन्दिरं यत्र सा ज्ञेया त्वग्रमन्दिरा।
चिरप्रवासयात्रायां रणे काले घनात्यये॥

मुसलमानोंके शासनकालमें भी भारतमें बड़े-बड़े जहाज बनते रहे। मार्को पोलो, जो तेरहवीं शताब्दीमें भारत आया था, लिखता है कि 'जहाजोंमें दोहरे तख्तोंकी

Scanned with CamScanner

जुड़ाई होती थी, लोहेकी कीलोंसे उनको मजबूत बनाया जाता था और उनके सूराखोंको एक प्रकारकी गोंदसे भरा जाता था। इतने बड़े जहाज होते थे कि उनमें तीन-तीन सौ मल्लाह लगते थे। एक-एक जहाजपर ५ से ६ हजारतक बोरे लादे जा सकते थे। इनमें रहनेके लिये ऊपर कई कोठरियाँ बनी रहती थीं, जिनमें सब तरहके आरामका प्रबन्ध रहता था। जब पेंदा खराब होने लगता था, तब उसपर लकड़ीका एक नया तह जड़ दिया जाता था। इस तरह कभी-कभी एकके ऊपर एक ६ तहतक लगायी जाती थीं।' पद्रंहवीं शताब्दीमें निकोलो कांटी नामक यात्री भारत आया था। वह लिखता है कि 'भारतीय जहाज हमारे जहाजोंसे बहुत बड़े होते हैं' उनका पेंदा तेहरे तख्तोंका ऐसा बना होता है कि वह भयानक तूफानोंका भी सामना कर सकता है। कुछ जहाज ऐसे बने होते हैं कि उनका एक भाग बेकार हो जानेपर बाकीसे काम चल जाता है।' वर्थमा नामक एक दूसरे यात्रीने कालीकटमें जहाजोंके बननेका वर्णन किया है। वह लिखता है कि 'लकड़ीके तख्तोंकी ऐसी जुड़ाई होती है कि उनमेंसे जरा भी पानी नहीं आता। जहाजोंमें कभी दो-दो बादबान (पाल) सूती कपड़ेके लगाये जाते हैं कि जिनमें हवा खूब भर सके। लंगर कभी-कभी पत्थरके भी होते थे। ईरानसे कन्याकुमारीतक आनेमें आठ दिनका समय लग जाता था।' समुद्रतटवर्ती राजाओंके पास जहाजोंके बड़े-बड़े बेड़े रहते थे। देश-नदियोंमें चलनेवाले हजारों नावोंके बेड़े होते थे। अकबरके नौ-विभागका अध्यक्ष 'मीर बहर' कहलाता था। छत्रपति शिवाजीका भी अपना जहाजी बेड़ा था, जिसका अध्यक्ष 'दरियासारंग' कहलाता था। डाक्टर राधाकुमुद मुकर्जीने अपनी 'इण्डियन शिपिंग' नामक पुस्तकमें भारतीय जहाजोंका बड़ा रोचक, सप्रमाण इतिहास दिया है। अब देखना है कि इस भारतीय प्राचीन नौ-निर्माणकलाको नष्ट कैसे किया गया।

पाश्चात्योंका जब भारतसे सम्पर्क हुआ, तब वे यहाँके जहाजोंको देखकर चकित रह गये। सत्रहवीं शताब्दीतक यूरोपीय जहाज अधिक-से-अधिक ६सौ टनके थे, परन्तु भारतमें उन्होंने 'गोघा' नामक ऐसे बड़े-बड़े जहाज देखे, जो १५सौ टनसे भी अधिकके होते थे। यूरोपीय कम्पनियाँ इन जहाजोंको काममें लाने लगीं और हिंदुस्तानी कारीगरोंद्वारा जहाज बनवानेके लिये उन्होंने कई कारखाने खोल दिये। सन् १८११ में लेफ्टिनेंट वाकर लिखता है कि 'ब्रिटिश जहाजी बेड़ेके जहाजोंकी हर बारहवें वर्ष मरम्मत करानी पड़ती थी, परंतु सागौनके बने हुए भारतीय जहाज पचास वर्षोंसे अधिकतक बिना किसी मरम्मतके काम देते थे।' 'ईस्ट इण्डिया कम्पनी' के पास 'दरिया दौलत' नामक एक जहाज था, जो ८७ वर्षतक काम देता रहा। जहाजोंको बनानेमें शीशम, साल और सागौन—तीनों लकड़ियाँ काममें लायी जाती थीं। सन् १८११में एक फ्रांसीसी यात्री वाल्टजर सालविन्स अपनी 'ले हिंदू' नामक पुस्तकमें लिखता है कि 'प्राचीन समयमें नौ-निर्माणकलामें हिंदू सबसे आगे थे और आज भी वे इसमें यूरोपको पाठ पढ़ा सकते हैं। अंग्रेजोंने, जो कलाओंके सीखनेमें बड़े चतुर होते हैं, हिंदुओंसे जहाज बनानेकी कई बातें सीखीं। भारतीय जहाजोंमें सुन्दरता तथा उपयोगिताका बड़ा अच्छा योग है और वे हिंदुस्थानियोंकी कारीगरी और उनके धैर्यके नमूने हैं।' बम्बईके कारखानेमें १७३६ से १८६३ तक ३०० जहाज तैयार हुए, जिनमें बहुतसे इंगलैण्डके 'शाही बेड़े' में शामिल कर लिये गये। इनमें 'एशिया' नामक जहाज २२८९ टनका था और उसमें ८४ तोपें लगी थीं। बंगालमें हुगली, सिलहट, चटगाँव, ढाका आदि स्थानोंमें जहाज बनानेके कारखाने थे। सन् १७८१ से १८२१ तक १, २२, ६९३ टनके २७२ जहाज केवल हुगलीमें तैयार हुए थे।

ब्रिटेनके जहाजी व्यापारी भारतीय नौ-निर्माणकलाका यह उत्कर्ष सहन न कर सके और वे 'ईस्ट इण्डिया कम्पनी' को भारतीय जहाजोंका उपयोग न करनेके लिये दबाने लगे। इस सम्बन्धमें कई बार जाँच की गयी। सन् १८११ में कर्नल वाकरने आँकड़े देकर यह सिद्ध किया कि 'भारतीय जहाजोंमें' बहुत कम खर्च पड़ता है और वे बड़े मजबूत होते हैं; यदि ब्रिटिश बेड़ेमें केवल भारतीय जहाज ही रखे जाएँ, तो बहुत बड़ी बचत हो सकती है।' जहाज बनानेवाले अंग्रेज कारीगर तथा व्यापारियोंको यह बात बहुत खटकी। डाक्टर टेलर लिखता है कि 'जब हिंदुस्थानी मालसे लदा हुआ हिंदुस्थानी जहाज लंदनके बंदरगाहपर पहुँचा, तब जहाजोंके अंग्रेज व्यापारियोंमें ऐसी घबराहट मची, जैसी कि आक्रमण करनेके लिये टेम्स नदीमें शत्रुपक्षके जहाजी बेड़ेको देखकर भी न मचती।' लंदन-बंदरगाहके

Scanned with CamScanner

कारीगरोंने सबसे पहले हो-हल्ला मचाया और कहा कि 'हमारा सब काम चौपट हो जायगा और हमारे कुटुम्ब भूखों मर जायँगे।' 'ईस्ट इण्डिया कम्पनी' के 'कोर्ट आफ डिरेक्टर्स' (निरीक्षक-मण्डल) ने लिखा कि 'हिंदुस्थानी खलासियोंने यहाँ आनेपर जो हमारा सामाजिक जीवन देखा, उससे भारतमें यूरोपीय आचरणके प्रति जो आदर और भय था, नष्ट हो गया। अपने देश लौटनेपर हमारे सम्बन्धमें वे जो बुरी बातें फैलायेंगे, उनसे एशिया-निवासियोंमें हमारे आचरणके प्रति जो आदर है, जिसके बलपर ही हम अपना प्रभुत्व जमाये बैठे हैं, नष्ट हो जायगा और उसका प्रभाव बड़ा हानिकारक होगा।' इसपर पार्लिमेंटने सर राबर्ट पीलकी अध्यक्षतामें एक कमेटी नियुक्त की। सदस्योंमें परस्पर मतभेद होनेपर भी इसकी रिपोर्टके आधारपर सन् १८१४ में एक कानून पास किया गया, जिसके अनुसार 'भारतीय खलासियोंको ब्रिटिश नाविक बननेका अधिकार न रहा। ब्रिटिश जहाजोंपर भी कम-से-कम तीन चौथाई अंग्रेज खलासी रखना अनिवार्य कर दिया गया। लंदनके बंदरगाहमें किसी ऐसे जहाजको घुसनेका अधिकार न रहा, जिसका स्वामी कोई ब्रिटिश न हो और यह नियम बना दिया गया कि इंग्लैंडमें अंग्रेजोंद्वारा बनाये हुए जहाजोंमें ही बाहरसे माल इंग्लैण्ड आ सकेगा।' कई कारणोंसे इस कानूनको कार्यान्वित करनेमें ढिलाई हुई, पर सन् १८६३ से इसकी पूरी पाबंदी होने लगी। भारतमें भी ऐसे कायदे-कानून बनाये गये कि जिससे वहाँकी प्राचीन नौ-निर्माणकलाका अन्त हो जाय। भारतीय जहाजोंपर लदे हुए मालकी चुंगी बढ़ा दी गयी और इस तरह उनको व्यापारमें अलग करनेका प्रयत्न किया गया। सर विलियम डिगवीने ठीक ही लिखा है कि 'पाश्चात्त्य संसारकी रानीने इस तरह प्राच्य सागरकी रानीका वध कर डाला!'

संक्षेपमें भारतीय नौ-निर्माणकलाको नष्ट करनेकी यह कहानी है!

Scanned with CamScanner